Gyanvividha, Vol.-3; Issue-2 (Apr.-June) 2026 : PP-142-152

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-4.5
Vol.-3; Issue-2 (Apr.-June) 2026
Page No142-152
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

Dr. Gautam Kumar
Bhupendra Narayan Mandal University, Madhepura, Bihar.

Corresponding Author :

Dr. Gautam Kumar
Bhupendra Narayan Mandal University, Madhepura, Bihar.

राष्ट्रीय आंदोलन में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और कांग्रेस की राजनीति : एक ऐतिहासिक अध्ययन (1920–1947)

सार (Abstract) : भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के मध्य विकसित संबंधों का ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। औपनिवेशिक भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में एक नए औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का उदय हुआ, जिसने भारतीय अर्थव्यवस्था, राजनीति और राष्ट्रीय चेतना को गहरे रूप से प्रभावित किया। विशेषतः 1920 से 1947 के मध्य, भारतीय उद्योगपतियों ने राष्ट्रीय आंदोलन को आर्थिक, वैचारिक तथा संगठनात्मक स्तर पर महत्वपूर्ण संबल प्रदान किया। इस दौर में घनश्याम दास बिड़ला और जमनालाल बजाज जैसे प्रतिष्ठित उद्योगपति राष्ट्रीय आंदोलन तथा कांग्रेस की गतिविधियों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े रहे।

यह शोध कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के अंतर्संबंधों, उनके पारस्परिक हितों तथा राजनीतिक-आर्थिक उद्देश्यों का तार्किक विश्लेषण करता है। अध्ययन में यह समझने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार भारतीय उद्योगपतियों ने ब्रिटिश औपनिवेशिक आर्थिक नीतियों का विरोध करते हुए स्वदेशी उद्योगों के संरक्षण, आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा राष्ट्रवादी राजनीति को प्रोत्साहित किया। इसके साथ ही, यह शोध इस तथ्य का भी समालोचनात्मक परीक्षण करता है कि कांग्रेस की नीतियों और कार्यक्रमों पर इस वर्ग का कितना प्रभाव था तथा इस संबंध में समकालीन दौर में कौन-सी वैचारिक आलोचनाएँ उभरीं।

प्राथमिक व द्वितीयक ऐतिहासिक स्रोतों, समकालीन साहित्य तथा आलोचनात्मक दृष्टिकोणों के आधार पर यह अध्ययन निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि राष्ट्रीय आंदोलन में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और कांग्रेस के बीच संबंध केवल एकपक्षीय नहीं थे, बल्कि वे सहयोग, हित-संतुलन और दीर्घकालिक राजनीतिक रणनीति पर आधारित थे,

जिन्होंने न केवल स्वतंत्रता संग्राम को गति दी, अपितु स्वतंत्र भारत की भावी आर्थिक दिशा और विकास के मॉडल को भी निर्धारित किया।

मुख्य शब्द (Keywords) : राष्ट्रीय आंदोलन, औद्योगिक पूँजीपति वर्ग, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, आर्थिक राष्ट्रवाद, स्वदेशी आंदोलन, औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था, भारतीय उद्योगपति, राष्ट्रवाद, पूँजीवाद, स्वदेशी, आर्थिक आत्मनिर्भरता, हित-संतुलन।

प्रस्तावना : भारत में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का उदय औपनिवेशिक आर्थिक संरचना की उपज था। ब्रिटिश शासन ने भारत को एक औपनिवेशिक बाजार के रूप में विकसित किया, जिसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटेन के औद्योगिक उत्पादन के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराना तथा तैयार वस्तुओं के लिए बाजार सुनिश्चित करना था। इससे पारंपरिक भारतीय कुटीर उद्योगों को गंभीर क्षति पहुँची और भारतीय अर्थव्यवस्था पर निर्भरता बढ़ी। तथापि, उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में वस्त्र, जूट, इस्पात तथा खनन उद्योगों के विकास के साथ भारतीय उद्योगपति वर्ग धीरे-धीरे उभरने लगा।

औद्योगिक विकास की इस प्रक्रिया में भारतीय व्यापारिक समुदायों—मारवाड़ी, पारसी, गुजराती और अन्य उद्यमी समूहों—ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। Jamsetji Tata द्वारा स्थापित औद्योगिक प्रयासों ने आधुनिक भारतीय उद्योग की आधारशिला रखी, जबकि बाद में Ghanshyam Das Birla जैसे उद्योगपतियों ने राष्ट्रीय राजनीति से अपने संबंध मजबूत किए। भारतीय उद्योगपतियों ने महसूस किया कि ब्रिटिश आर्थिक नीतियाँ विदेशी कंपनियों को अधिक संरक्षण प्रदान करती हैं, जबकि भारतीय उद्योगों को सीमित अवसर मिलते हैं। इस कारण वे आर्थिक संरक्षणवाद, स्वदेशी उत्पादन तथा राष्ट्रीय बाजार की अवधारणा के समर्थक बने।

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में बंग-भंग विरोधी आंदोलन और Swadeshi Movement ने भारतीय उद्योगपतियों और राष्ट्रीय आंदोलन के बीच निकटता बढ़ाई। स्वदेशी के विचार ने भारतीय उत्पादों के उपयोग को राष्ट्रीय कर्तव्य के रूप में प्रस्तुत किया, जिससे भारतीय उद्योगों को लाभ पहुँचा। आगे चलकर कांग्रेस द्वारा संचालित असहयोग, सविनय अवज्ञा और भारत छोड़ो आंदोलन जैसे अभियानों ने औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के लिए एक ऐसा राजनीतिक वातावरण तैयार किया जिसमें वे राष्ट्रवादी राजनीति के साथ सीमित लेकिन प्रभावशाली सहयोग कर सके।

इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के संबंधों का अध्ययन अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यह केवल आर्थिक सहयोग की कहानी नहीं, बल्कि राष्ट्रवाद, वर्गीय हितों और औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध साझा संघर्ष की जटिल प्रक्रिया को समझने का माध्यम भी है।

औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का उदय : भारत में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का उदय औपनिवेशिक शासन की आर्थिक नीतियों, वैश्विक पूँजीवादी विस्तार तथा भारतीय व्यापारिक समुदायों की उद्यमशीलता के सम्मिलित प्रभाव का परिणाम था। सामान्यतः "औद्योगिक पूँजीपति वर्ग" से अभिप्राय उस वर्ग से है, जिसने उद्योग, व्यापार, उत्पादन और निवेश के माध्यम से आर्थिक शक्ति अर्जित की तथा धीरे-धीरे सामाजिक एवं राजनीतिक प्रभाव भी स्थापित किया। भारतीय संदर्भ में यह वर्ग उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में अधिक स्पष्ट रूप से उभरता है।

(क) औपनिवेशिक आर्थिक व्यवस्था और पूँजीपति वर्ग का निर्माण : ब्रिटिश शासन के प्रारंभिक चरण में भारत को मुख्यतः कच्चे माल के स्रोत तथा तैयार माल के बाजार के रूप में विकसित किया गया। अंग्रेजी शासन की आर्थिक नीति का उद्देश्य भारतीय अर्थव्यवस्था को ब्रिटिश औद्योगिक हितों के अधीन बनाना था। कपास, जूट, नील, चाय तथा खनिज संसाधनों का उत्पादन औपनिवेशिक हितों के अनुसार संगठित किया गया। इसके परिणामस्वरूप पारंपरिक हस्तशिल्प और कुटीर उद्योगों को गहरा आघात पहुँचा।

फिर भी, औपनिवेशिक संरचना के भीतर कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुईं, जिनसे भारतीय उद्यमशील वर्ग के विकास की संभावना बनी। रेलवे, डाक-तार, बैंकिंग, बंदरगाहों और परिवहन सुविधाओं का विस्तार, यद्यपि

औपनिवेशिक हितों के लिए किया गया था, परंतु इससे व्यापार और उद्योग के लिए अवसंरचनात्मक आधार भी तैयार हुआ। भारतीय व्यापारिक समुदायों ने इन अवसरों का उपयोग करते हुए उद्योगों में निवेश करना आरम्भ किया। विशेषकर सूती वस्त्र उद्योग, जूट उद्योग, लौह-इस्पात उद्योग, चीनी उद्योग तथा खनन क्षेत्र में भारतीय पूँजी का निवेश बढ़ा। इस प्रक्रिया ने एक ऐसे वर्ग को जन्म दिया, जो केवल व्यापारी नहीं बल्कि औद्योगिक उत्पादक के रूप में भी उभरा। यही वर्ग आगे चलकर भारतीय औद्योगिक पूँजीपति वर्ग कहलाया।

(ख) भारतीय उद्योगों का विकास और पूँजीपतियों की भूमिका : उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत में आधुनिक उद्योगों की स्थापना आरम्भ हुई। मुंबई (तत्कालीन बंबई) में सूती वस्त्र उद्योग तथा बंगाल में जूट उद्योग ने सबसे पहले औद्योगिक विकास का मार्ग प्रशस्त किया। पारसी, मारवाड़ी और गुजराती व्यापारिक समुदायों ने औद्योगिक निवेश में विशेष रुचि दिखाई।

इस संदर्भ में Jamsetji Tata का योगदान उल्लेखनीय है, जिन्होंने आधुनिक औद्योगिक विकास की आधारशिला रखी। उनके प्रयासों से लौह-इस्पात उद्योग तथा वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा को प्रोत्साहन मिला। आगे चलकर Tata Group भारतीय उद्योग जगत की प्रमुख शक्ति के रूप में उभरा।

इसी प्रकार मारवाड़ी उद्योगपतियों में Ghanshyam Das Birla ने वस्त्र, चीनी और अन्य उद्योगों में निवेश कर राष्ट्रीय उद्योग जगत को नई दिशा दी। वे केवल उद्योगपति ही नहीं बल्कि राष्ट्रवादी राजनीति के समर्थक भी थे। इसी क्रम में Jamnalal Bajaj ने स्वदेशी उद्योगों को बढ़ावा देने और राष्ट्रवादी गतिविधियों में आर्थिक सहयोग देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

(ग) प्रथम विश्व युद्ध और औद्योगिक पूँजीवाद का विस्तार : प्रथम विश्व युद्ध भारतीय औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के विकास में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ। युद्ध के कारण ब्रिटेन से आयातित वस्तुओं की आपूर्ति प्रभावित हुई, जिससे भारतीय उद्योगों के लिए बाजार का विस्तार हुआ। भारतीय उद्योगपतियों ने इस अवसर का लाभ उठाते हुए उत्पादन क्षमता बढ़ाई।

युद्धकालीन परिस्थितियों में कपड़ा, इस्पात और उपभोक्ता वस्तुओं के क्षेत्र में भारतीय उद्योगों का तेजी से विस्तार हुआ। इससे भारतीय पूँजीपतियों का आत्मविश्वास बढ़ा और उन्होंने ब्रिटिश आर्थिक नीतियों में अधिक भागीदारी तथा संरक्षण की माँग करनी शुरू की। वे यह अनुभव करने लगे कि यदि राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक संरक्षण और नीति-निर्माण में भारतीय हितों को प्राथमिकता मिले, तो उद्योगों का अधिक विकास संभव है।

(घ) आर्थिक हित और राष्ट्रवाद की ओर झुकाव : भारतीय औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का राष्ट्रवादी आंदोलन के प्रति झुकाव केवल वैचारिक नहीं था; इसके पीछे स्पष्ट आर्थिक हित भी कार्यरत थे। ब्रिटिश सरकार विदेशी कंपनियों और आयातित वस्तुओं को संरक्षण देती थी, जबकि भारतीय उद्योगों को प्रतिस्पर्धात्मक असमानताओं का सामना करना पड़ता था। ऐसी स्थिति में भारतीय पूँजीपति आर्थिक राष्ट्रवाद के समर्थक बने।

उन्होंने संरक्षणवादी नीतियों, स्वदेशी उद्योगों के संवर्धन, आयात नियंत्रण और भारतीय पूँजी के विकास की माँग की। यही माँगें कांग्रेस के आर्थिक कार्यक्रमों से मेल खाने लगीं। फलस्वरूप कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के बीच वैचारिक तथा व्यावहारिक निकटता बढ़ने लगी।

इस प्रकार औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का उदय केवल आर्थिक घटना नहीं था, बल्कि उसने भारतीय राष्ट्रवाद की दिशा, राजनीतिक गठबंधनों और स्वतंत्रता आंदोलन की रणनीतियों को भी प्रभावित किया।

कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपतियों के संबंध : भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के संबंध जटिल, बहुआयामी और परिस्थितिजन्य थे। ये संबंध केवल आर्थिक सहयोग तक सीमित नहीं थे, बल्कि इनमें वैचारिक समर्थन, राजनीतिक रणनीति, आर्थिक हितों की रक्षा तथा राष्ट्रवादी आकांक्षाओं का समावेश था। 1920 के दशक से 1947 तक कांग्रेस और उद्योगपतियों के बीच निकटता धीरे-धीरे अधिक स्पष्ट होती गई।

(क) साझा हितों की आधारभूमि : कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपतियों के संबंधों की पृष्ठभूमि में साझा आर्थिक और राजनीतिक हित विद्यमान थे। कांग्रेस ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से राजनीतिक स्वतंत्रता की माँग कर रही थी, जबकि भारतीय उद्योगपति ब्रिटिश आर्थिक वर्चस्व से मुक्ति चाहते थे।

औद्योगिक पूँजीपति यह महसूस करते थे कि ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीतियाँ विदेशी उद्योगों को लाभ पहुँचाती हैं और भारतीय उद्योगों के विकास में बाधा उत्पन्न करती हैं। कांग्रेस भी आर्थिक स्वराज, स्वदेशी उत्पादन तथा राष्ट्रीय बाजार की अवधारणा को बढ़ावा दे रही थी। परिणामस्वरूप दोनों के हितों में सामंजस्य स्थापित हुआ।

(ख) आर्थिक सहयोग और वित्तीय समर्थन : राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान अनेक उद्योगपतियों ने कांग्रेस को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष आर्थिक सहायता प्रदान की। विशेषकर Ghanshyam Das Birla और Jamnalal Bajaj ने कांग्रेस के कार्यक्रमों, आंदोलनों तथा नेताओं को आर्थिक सहयोग दिया।

Mahatma Gandhi और घनश्यामदास बिड़ला के बीच घनिष्ठ संबंधों का उल्लेख अनेक ऐतिहासिक अध्ययनों में मिलता है। बिड़ला ने राष्ट्रवादी गतिविधियों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के साथ-साथ राष्ट्रीय आर्थिक विकास के प्रश्नों पर भी सक्रिय भूमिका निभाई। जमनालाल बजाज ने स्वदेशी, खादी और ग्रामोद्योग के प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान दिया और स्वयं को गांधीवादी कार्यक्रमों से जोड़ा।

हालाँकि, यह आर्थिक सहयोग पूर्णतः निःस्वार्थ या वैचारिक नहीं था। उद्योगपति चाहते थे कि स्वतंत्र भारत में ऐसी आर्थिक नीतियाँ लागू हों जो भारतीय उद्योगों के विकास को प्रोत्साहित करें। इसलिए उनका कांग्रेस के प्रति समर्थन आंशिक रूप से रणनीतिक भी था।

(ग) गांधी और उद्योगपति वर्ग के संबंध : Mahatma Gandhi का दृष्टिकोण पूँजीवाद के प्रति पूर्णतः विरोधात्मक नहीं था। उन्होंने "ट्रस्टीशिप" (Trusteeship) का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार पूँजीपति अपने संसाधनों का उपयोग समाज के व्यापक हित में करें। गांधी उद्योगपतियों को सामाजिक उत्तरदायित्व निभाने वाला वर्ग मानते थे, बशर्ते वे नैतिकता और जनहित को प्राथमिकता दें। गांधी और उद्योगपतियों के संबंधों में व्यावहारिकता दिखाई देती है। एक ओर गांधी मशीनवादी औद्योगीकरण के आलोचक थे, दूसरी ओर वे राष्ट्रवादी आंदोलन को चलाने के लिए आर्थिक संसाधनों की आवश्यकता को भी समझते थे। इस कारण उद्योगपतियों के साथ उनके संबंध सहयोगात्मक बने रहे।

(घ) संस्थागत सहयोग और नीति-निर्माण : भारतीय उद्योगपतियों ने केवल आर्थिक सहयोग ही नहीं दिया, बल्कि संगठित मंचों के माध्यम से राष्ट्रीय आर्थिक नीतियों को प्रभावित करने का प्रयास भी किया। उदाहरणतः Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI) की स्थापना भारतीय उद्योगपतियों की आर्थिक आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करने हेतु की गई। इस संस्था ने संरक्षणवादी नीतियों, भारतीय उद्योगों के प्रोत्साहन तथा राष्ट्रीय आर्थिक योजना की माँग की। कांग्रेस के कई नेता उद्योगपतियों के विचारों को सुनते थे, परंतु साथ ही कांग्रेस के भीतर समाजवादी और वामपंथी धारा उद्योगपतियों के प्रभाव की आलोचना भी करती थी। इस प्रकार कांग्रेस और पूँजीपतियों का संबंध सहयोग और तनाव—दोनों का मिश्रण था।

(ङ) सीमाएँ और अंतर्विरोध : कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपतियों के संबंधों में कई अंतर्विरोध भी मौजूद थे। कांग्रेस के भीतर समाजवादी नेता आर्थिक समानता और श्रमिक अधिकारों की वकालत करते थे, जबकि उद्योगपति लाभ और निजी संपत्ति की सुरक्षा चाहते थे। इसी प्रकार गांधी ग्राम-आधारित अर्थव्यवस्था पर बल देते थे, जबकि उद्योगपति आधुनिक औद्योगिक विकास के समर्थक थे।

फिर भी, स्वतंत्रता प्राप्ति के साझा उद्देश्य ने इन अंतर्विरोधों को नियंत्रित रखा। यही कारण है कि राष्ट्रीय आंदोलन के अंतिम चरण तक कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का सहयोग बना रहा।

प्रमुख उद्योगपतियों की भूमिका : राष्ट्रवाद, उद्योग और कांग्रेस की राजनीति : भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान

औद्योगिक पूँजीपति वर्ग की भूमिका केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने राजनीतिक, सामाजिक और वैचारिक स्तर पर भी महत्वपूर्ण हस्तक्षेप किया। अनेक भारतीय उद्योगपतियों ने राष्ट्रवादी आंदोलन को आर्थिक सहायता प्रदान की, स्वदेशी उद्योगों को बढ़ावा दिया तथा राष्ट्रीय नेतृत्व के साथ सहयोगात्मक संबंध विकसित किए। यद्यपि उनका समर्थन कई बार आर्थिक हितों से प्रेरित था, फिर भी यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि राष्ट्रीय आंदोलन की आर्थिक आधार-रचना को सुदृढ़ करने में इनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण रही।

(क) Ghanshyam Das Birla की भूमिका : घनश्यामदास बिड़ला भारतीय औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के सबसे प्रभावशाली प्रतिनिधियों में माने जाते हैं। वे वस्त्र, चीनी, जूट तथा अन्य उद्योगों में निवेश करने वाले प्रमुख उद्योगपति थे। उनका महत्त्व केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं था; वे राष्ट्रवादी राजनीति और कांग्रेस नेतृत्व के साथ गहरे रूप से जुड़े हुए थे। विशेष रूप से उनका संबंध Mahatma Gandhi से अत्यंत निकट था। बिड़ला ने कांग्रेस के अनेक कार्यक्रमों, आंदोलनों और संस्थाओं को आर्थिक सहयोग प्रदान किया। उन्होंने गांधी के अभियानों के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई और राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान राजनीतिक गतिविधियों को संसाधन उपलब्ध कराने में भूमिका निभाई।

बिड़ला आर्थिक राष्ट्रवाद के समर्थक थे। उनका मानना था कि ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन भारतीय उद्योगों के विकास में बाधक है। इसलिए वे ऐसी आर्थिक व्यवस्था के पक्षधर थे जिसमें भारतीय उद्योगों को संरक्षण मिले, आयातित वस्तुओं पर निर्भरता घटे तथा घरेलू उत्पादन को प्रोत्साहन मिले।

हालाँकि, कुछ इतिहासकार यह भी तर्क देते हैं कि बिड़ला का कांग्रेस के प्रति समर्थन केवल राष्ट्रवादी भावना से प्रेरित नहीं था, बल्कि स्वतंत्र भारत में व्यापारिक हितों की सुरक्षा की अपेक्षा भी उससे जुड़ी थी। मार्क्सवादी इतिहासकार इसे "राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग" की रणनीतिक भागीदारी के रूप में देखते हैं।

(ख) Jamnalal Bajaj की भूमिका : जमनालाल बजाज राष्ट्रवादी उद्योगपतियों में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं क्योंकि वे केवल आर्थिक सहयोगी नहीं, बल्कि स्वतंत्रता आंदोलन के सक्रिय भागीदार भी थे। उन्हें कई बार "गांधीजी के दत्तक पुत्र" के रूप में भी संदर्भित किया जाता है, क्योंकि उनका जीवन गांधीवादी मूल्यों से अत्यधिक प्रभावित था। बजाज ने स्वदेशी, खादी, ग्रामोद्योग और सामाजिक सुधार अभियानों में सक्रिय भागीदारी की। वे कांग्रेस के विभिन्न कार्यक्रमों से जुड़े रहे और राष्ट्रवादी राजनीति को आर्थिक सहायता प्रदान करते रहे। उन्होंने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार, स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार और आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था की अवधारणा को मजबूत करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

उनकी भूमिका केवल उद्योगपति की नहीं थी; वे सामाजिक सुधारक और राष्ट्रवादी कार्यकर्ता भी थे। उन्होंने अस्पृश्यता उन्मूलन, शिक्षा और ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों में भी सक्रिय रुचि दिखाई। इस प्रकार बजाज का योगदान आर्थिक राष्ट्रवाद और सामाजिक राष्ट्रवाद दोनों स्तरों पर महत्त्वपूर्ण था।

(ग) J. R. D. Tata तथा टाटा परंपरा की भूमिका : भारतीय औद्योगिक विकास के इतिहास में टाटा परिवार का विशेष महत्त्व है। आधुनिक औद्योगिक भारत की नींव रखने में Jamsetji Tata की अग्रणी भूमिका रही, जबकि बाद में J. R. D. Tata ने भारतीय उद्योगों के विस्तार और संस्थागत विकास को नई दिशा दी।

हालाँकि टाटा समूह कांग्रेस की प्रत्यक्ष राजनीति में बिड़ला या बजाज जितना सक्रिय नहीं था, फिर भी उसने भारतीय आर्थिक स्वावलंबन की प्रक्रिया को गति प्रदान की। इस्पात, ऊर्जा, शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में निवेश ने भारतीय राष्ट्रवाद को आर्थिक आधार प्रदान किया। विशेषकर Tata Steel जैसे औद्योगिक उपक्रमों ने यह सिद्ध किया कि भारतीय उद्योग विदेशी प्रभुत्व के बावजूद आत्मनिर्भर औद्योगिक ढाँचा विकसित कर सकते हैं। राष्ट्रवादी नेतृत्व इसे भारतीय आर्थिक क्षमता और आधुनिकता के प्रतीक के रूप में देखता था।

टाटा उद्योग समूह अपेक्षाकृत उदारवादी आर्थिक दृष्टिकोण का समर्थक था और वह राष्ट्रीय आर्थिक नियोजन

के पक्ष में भी था। स्वतंत्रता के निकट वर्षों में भारतीय उद्योगपतियों द्वारा प्रस्तुत आर्थिक योजनाओं में टाटा समूह की वैचारिक भागीदारी दिखाई देती है।

(घ) अन्य उद्योगपतियों और व्यापारिक समुदायों की भूमिका : केवल बिड़ला, बजाज और टाटा ही नहीं, बल्कि अनेक अन्य उद्योगपतियों और व्यापारिक समूहों ने भी राष्ट्रीय आंदोलन को अप्रत्यक्ष समर्थन प्रदान किया। मारवाड़ी, गुजराती और पारसी उद्यमी वर्ग ने भारतीय उद्योगों में पूँजी निवेश किया तथा राष्ट्रीय आर्थिक चेतना को मजबूत किया। इन व्यापारिक समूहों ने कांग्रेस के आर्थिक कार्यक्रमों को समर्थन दिया क्योंकि वे ब्रिटिश आर्थिक वर्चस्व से असंतुष्ट थे। वे संरक्षणवादी नीतियों, भारतीय बैंकिंग के विस्तार और घरेलू उद्योगों के संवर्धन के पक्षधर थे।

(ङ) उद्योगपतियों की भूमिका का समग्र मूल्यांकन : राष्ट्रीय आंदोलन में उद्योगपतियों की भूमिका बहुआयामी थी। उन्होंने—

- कांग्रेस को आर्थिक संसाधन उपलब्ध कराए,
- स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहित किया,
- आर्थिक राष्ट्रवाद की अवधारणा को मजबूत किया,
- राष्ट्रीय आर्थिक योजना और औद्योगीकरण की आवश्यकता को रेखांकित किया।

फिर भी, उनके योगदान का मूल्यांकन करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उनका समर्थन पूर्णतः निस्वार्थ नहीं था। वे स्वतंत्र भारत में ऐसी आर्थिक नीतियों की अपेक्षा रखते थे जो भारतीय निजी उद्योगों के विकास के अनुकूल हों। इसलिए उनकी भूमिका को राष्ट्रवादी प्रतिबद्धता और वर्गीय हित—दोनों के संदर्भ में समझना चाहिए।

आर्थिक राष्ट्रवाद और स्वदेशी आंदोलन : भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में आर्थिक राष्ट्रवाद एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण वैचारिक आधार था। आर्थिक राष्ट्रवाद का अभिप्राय ऐसी आर्थिक सोच से है जिसमें राष्ट्रीय उत्पादन, स्वदेशी उद्योग, आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा विदेशी आर्थिक प्रभुत्व से मुक्ति को प्राथमिकता दी जाती है। औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध भारतीय संघर्ष केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं था; उसका एक प्रमुख उद्देश्य आर्थिक शोषण से मुक्ति प्राप्त करना भी था।

(क) आर्थिक राष्ट्रवाद की अवधारणा : औपनिवेशिक भारत में यह धारणा व्यापक थी कि ब्रिटिश शासन भारत की आर्थिक संपदा का दोहन कर रहा है। भारतीय विचारकों और राष्ट्रवादी नेताओं ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि ब्रिटिश शासन ने भारत को कच्चे माल के स्रोत और तैयार माल के बाजार में परिवर्तित कर दिया है।

इस संदर्भ में आर्थिक राष्ट्रवाद का उद्देश्य था—

1. स्वदेशी उद्योगों का विकास,
2. विदेशी वस्तुओं पर निर्भरता कम करना,
3. राष्ट्रीय पूँजी के विकास को बढ़ावा देना,
4. भारतीय श्रम और संसाधनों की रक्षा करना।

औद्योगिक पूँजीपति वर्ग ने इन विचारों का समर्थन किया क्योंकि वे ब्रिटिश औद्योगिक प्रतिस्पर्धा से प्रभावित थे और घरेलू बाजार में संरक्षण चाहते थे।

(ख) Swadeshi Movement और राष्ट्रीय चेतना : 1905 के बंग-भंग विरोधी आंदोलन के दौरान स्वदेशी आंदोलन भारतीय राष्ट्रवाद का शक्तिशाली आर्थिक आयाम बनकर उभरा। स्वदेशी का अर्थ केवल भारतीय वस्तुओं का उपयोग नहीं था, बल्कि यह आर्थिक आत्मनिर्भरता और राष्ट्रीय स्वाभिमान का प्रतीक बन गया।

स्वदेशी आंदोलन के प्रमुख तत्व थे—

- विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार,
- भारतीय उद्योगों का समर्थन,

- घरेलू उत्पादन को प्रोत्साहन,
- राष्ट्रीय शिक्षा और आत्मनिर्भरता का प्रचार।

इस आंदोलन ने भारतीय उद्योगपतियों और राष्ट्रवादी नेतृत्व को साझा मंच प्रदान किया। विदेशी कपड़ों के बहिष्कार से भारतीय वस्त्र उद्योगों को लाभ हुआ और स्वदेशी उत्पादन की माँग बढ़ी।

(ग) गांधी और स्वदेशी का विचार : Mahatma Gandhi ने स्वदेशी को राष्ट्रीय आंदोलन का नैतिक और आर्थिक आधार बनाया। उन्होंने खादी, चरखा और ग्रामोद्योग को आत्मनिर्भर भारत के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया।
गांधी का स्वदेशी केवल औद्योगिक संरक्षणवाद नहीं था, बल्कि यह सामाजिक न्याय, रोजगार और विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था का भी विचार था। वे ग्रामीण भारत की आर्थिक पुनर्रचना पर बल देते थे।

हालाँकि यहाँ एक अंतर्विरोध स्पष्ट दिखाई देता है—जहाँ गांधी ग्राम-आधारित अर्थव्यवस्था की बात करते थे, वहीं औद्योगिक पूँजीपति आधुनिक उद्योगों और मशीन-आधारित उत्पादन का समर्थन करते थे। फिर भी दोनों के बीच स्वदेशी और ब्रिटिश आर्थिक प्रभुत्व के विरोध की साझा भूमि मौजूद थी।

(घ) स्वदेशी और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग : स्वदेशी आंदोलन ने भारतीय उद्योगपतियों को बड़ा आर्थिक अवसर प्रदान किया। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार से घरेलू उद्योगों को नया बाजार मिला। भारतीय उद्योगपतियों ने इसे केवल आर्थिक लाभ के रूप में नहीं, बल्कि राष्ट्रीय आर्थिक स्वावलंबन के अवसर के रूप में भी प्रस्तुत किया।
उद्योगपतियों ने स्वदेशी उद्योगों में निवेश बढ़ाया, भारतीय व्यापारिक नेटवर्क विकसित किए तथा राष्ट्रीय बाजार की अवधारणा को मजबूत किया। यही प्रक्रिया आगे चलकर स्वतंत्र भारत की औद्योगिक नीति और आत्मनिर्भर आर्थिक ढाँचे की नींव बनी।

(ङ) आर्थिक राष्ट्रवाद की सीमाएँ : यद्यपि आर्थिक राष्ट्रवाद और स्वदेशी आंदोलन ने राष्ट्रीय चेतना को मजबूत किया, फिर भी इनकी कुछ सीमाएँ थीं। स्वदेशी आंदोलन का लाभ मुख्यतः शहरी और औद्योगिक वर्गों को अधिक मिला, जबकि ग्रामीण गरीबों और श्रमिकों की समस्याएँ कई बार पीछे रह गईं।

इसके अतिरिक्त, उद्योगपति वर्ग और श्रमिक वर्ग के हितों में हमेशा सामंजस्य नहीं था। इसलिए आर्थिक राष्ट्रवाद को केवल राष्ट्रीय एकता के रूप में नहीं, बल्कि वर्गीय अंतर्विरोधों के साथ भी समझना आवश्यक है।

कांग्रेस की आर्थिक नीतियों पर औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का प्रभाव : भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की आर्थिक नीतियाँ केवल राजनीतिक स्वतंत्रता के लक्ष्य से संचालित नहीं थीं, बल्कि वे औपनिवेशिक आर्थिक शोषण के प्रतिरोध, आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा स्वतंत्र भारत के आर्थिक पुनर्निर्माण की कल्पना से भी प्रभावित थीं। इस प्रक्रिया में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में कांग्रेस की आर्थिक सोच को प्रभावित किया। यद्यपि कांग्रेस स्वयं विविध वैचारिक धाराओं—गांधीवादी, समाजवादी, उदारवादी और राष्ट्रवादी—का मंच थी, फिर भी औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के हितों और सुझावों की उपस्थिति उसकी आर्थिक नीतियों में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

(क) आर्थिक राष्ट्रवाद और संरक्षणवादी नीति का समर्थन : कांग्रेस के आर्थिक कार्यक्रमों में भारतीय उद्योगों के संरक्षण, विदेशी आर्थिक वर्चस्व के विरोध तथा राष्ट्रीय उत्पादन को बढ़ावा देने की प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। यह रुझान औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के हितों से मेल खाता था। भारतीय उद्योगपति चाहते थे कि ब्रिटिश सरकार द्वारा विदेशी वस्तुओं को दिए जाने वाले विशेष लाभ समाप्त हों तथा भारतीय उद्योगों को संरक्षण मिले।

इसी कारण कांग्रेस ने समय-समय पर स्वदेशी, विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और आर्थिक आत्मनिर्भरता को राजनीतिक संघर्ष का हिस्सा बनाया। इससे घरेलू उद्योगों को बाजार प्राप्त हुआ और भारतीय उद्योगपतियों के लिए अनुकूल वातावरण बना। कांग्रेस की आर्थिक भाषा में "राष्ट्रीय उद्योग", "आर्थिक स्वराज" और "स्वावलंबन" जैसे विचार प्रमुख होते गए।

(ख) उद्योगपतियों और कांग्रेस नेतृत्व के बीच संवाद : कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के संबंध केवल वैचारिक समानता तक सीमित नहीं थे, बल्कि इनके बीच नियमित संवाद भी स्थापित था। विशेषकर Ghanshyam Das Birla जैसे उद्योगपतियों का कांग्रेस नेतृत्व और Mahatma Gandhi से निकट संबंध था।

कई उद्योगपति कांग्रेस के नेताओं को आर्थिक सलाह देते थे और स्वतंत्र भारत की आर्थिक संरचना को लेकर अपनी राय प्रस्तुत करते थे। उद्योगपतियों का मानना था कि राजनीतिक स्वतंत्रता तभी सार्थक होगी जब भारत आर्थिक रूप से भी आत्मनिर्भर और औद्योगिक दृष्टि से मजबूत बने।

हालाँकि कांग्रेस ने पूँजीपतियों के सुझावों को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं किया; उसने कई बार श्रमिक अधिकारों, सार्वजनिक कल्याण तथा सामाजिक न्याय के प्रश्नों को भी महत्व दिया। फिर भी उद्योगपतियों की प्राथमिकताएँ नीति-निर्माण में प्रभावशाली बनी रहीं।

(ग) Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI) और आर्थिक दृष्टि : भारतीय उद्योगपतियों ने अपने हितों को संगठित रूप से प्रस्तुत करने के लिए व्यापारिक संगठनों की स्थापना की। इनमें सबसे प्रमुख संस्था FICCI थी, जिसकी स्थापना भारतीय व्यापारिक और औद्योगिक वर्ग की आवाज़ को सशक्त करने के लिए की गई।

FICCI ने भारतीय उद्योगों को संरक्षण, आयात नियंत्रण, घरेलू पूँजी निवेश और राष्ट्रीय आर्थिक नियोजन की आवश्यकता पर बल दिया। कांग्रेस के कई नेता इन सुझावों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण थे, क्योंकि वे औपनिवेशिक आर्थिक प्रभुत्व से मुक्ति को राष्ट्रीय विकास की शर्त मानते थे।

इस प्रकार उद्योगपतियों ने केवल आर्थिक सहयोग ही नहीं दिया, बल्कि संगठित संस्थागत दबाव के माध्यम से कांग्रेस की आर्थिक दिशा को प्रभावित करने का प्रयास भी किया।

(घ) राष्ट्रीय आर्थिक योजना और उद्योगपतियों की भागीदारी : स्वतंत्रता के निकट वर्षों में भारतीय उद्योगपतियों ने भारत के आर्थिक भविष्य को लेकर स्पष्ट योजनाएँ प्रस्तुत करनी शुरू कीं। विशेष रूप से 1940 के दशक में तैयार की गई औद्योगिक विकास संबंधी अवधारणाओं ने कांग्रेस के भीतर नियोजित आर्थिक विकास की सोच को प्रभावित किया।

इस संदर्भ में भारतीय उद्योगपतियों द्वारा प्रस्तुत "बॉम्बे प्लान" (Bombay Plan) का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है, जिसमें राज्य और निजी क्षेत्र के सहयोग से औद्योगिक विकास की रूपरेखा प्रस्तुत की गई। इस योजना का उद्देश्य भारी उद्योगों का विकास, उत्पादन वृद्धि तथा आर्थिक विकास को गति देना था।

यद्यपि कांग्रेस के भीतर समाजवादी धारा राज्य नियंत्रण और समान वितरण की समर्थक थी, फिर भी निजी उद्योगों की भूमिका को पूर्णतः अस्वीकार नहीं किया गया। फलस्वरूप स्वतंत्र भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था की अवधारणा विकसित हुई, जिसमें निजी और सार्वजनिक—दोनों क्षेत्रों को महत्त्व दिया गया।

(ङ) गांधीवादी दृष्टिकोण और औद्योगिक हितों के बीच संतुलन : Mahatma Gandhi ग्राम-आधारित अर्थव्यवस्था, कुटीर उद्योगों और विकेंद्रीकृत उत्पादन पर बल देते थे। इसके विपरीत औद्योगिक पूँजीपति आधुनिक मशीन-आधारित उद्योगों और बड़े पैमाने के उत्पादन के पक्षधर थे।

फिर भी कांग्रेस ने इन दोनों दृष्टियों के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया। उसने एक ओर खादी, ग्रामोद्योग और स्वदेशी को बढ़ावा दिया, दूसरी ओर औद्योगिक विकास को राष्ट्रीय प्रगति का आधार भी माना। यही संतुलन आगे चलकर स्वतंत्र भारत की आर्थिक नीति का महत्वपूर्ण तत्व बना।

(च) प्रभाव का समग्र मूल्यांकन : कांग्रेस की आर्थिक नीतियों पर औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का प्रभाव प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में दिखाई देता है। यह प्रभाव निम्न रूपों में स्पष्ट था—

- संरक्षणवादी औद्योगिक नीति का समर्थन,

- राष्ट्रीय उद्योगों को प्रोत्साहन,
- आर्थिक स्वावलंबन की अवधारणा,
- नियोजित आर्थिक विकास पर बल,
- निजी उद्योगों की वैध भूमिका की स्वीकृति।

फिर भी यह प्रभाव पूर्ण प्रभुत्व का रूप नहीं ले पाया, क्योंकि कांग्रेस के भीतर समाजवादी, गांधीवादी और वामपंथी धाराएँ भी समान रूप से सक्रिय थीं।

आलोचनात्मक विश्लेषण : मार्क्सवादी, राष्ट्रवादी और उदारवादी दृष्टिकोण : राष्ट्रीय आंदोलन में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और कांग्रेस के संबंधों की व्याख्या विभिन्न इतिहासकारों और विचारधारात्मक परंपराओं ने अलग-अलग प्रकार से की है। विशेष रूप से मार्क्सवादी, राष्ट्रवादी और उदारवादी दृष्टिकोण इस विषय पर तीन महत्त्वपूर्ण व्याख्यात्मक ढाँचे प्रस्तुत करते हैं।

(क) मार्क्सवादी दृष्टिकोण : मार्क्सवादी इतिहासकार कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के संबंधों को मुख्यतः वर्गीय हितों के संदर्भ में देखते हैं। उनके अनुसार भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष नहीं था, बल्कि इसमें वर्गीय शक्तियों की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण थी।

मार्क्सवादी विचारकों का तर्क है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पर "राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग" अर्थात् औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का प्रभाव बढ़ता गया। उनके अनुसार कांग्रेस की आर्थिक नीतियाँ कई बार उद्योगपतियों के हितों के अनुरूप दिखाई देती हैं, जैसे संरक्षणवादी नीतियों का समर्थन, निजी संपत्ति की सुरक्षा तथा पूँजी निवेश को बढ़ावा।
इस दृष्टिकोण के अनुसार पूँजीपति वर्ग ने राष्ट्रीय आंदोलन का समर्थन इसलिए किया क्योंकि वे ब्रिटिश पूँजीवादी प्रभुत्व से मुक्त होकर घरेलू बाजार और उद्योगों पर अधिक नियंत्रण प्राप्त करना चाहते थे। अतः उनका राष्ट्रवाद आंशिक रूप से वर्गीय हितों से प्रेरित था।

मार्क्सवादी आलोचना यह भी इंगित करती है कि कांग्रेस ने कई बार श्रमिक आंदोलनों और वर्ग-संघर्ष को सीमित करने का प्रयास किया ताकि राष्ट्रीय एकता बनी रहे और पूँजीपति वर्ग का समर्थन बना रहे।
हालाँकि, मार्क्सवादी दृष्टिकोण की आलोचना यह कहकर की जाती है कि यह राष्ट्रवादी भावनाओं और औपनिवेशिक विरोध की व्यापकता को कम करके आँकता है।

(ख) राष्ट्रवादी दृष्टिकोण : राष्ट्रवादी इतिहासकार कांग्रेस और उद्योगपतियों के संबंधों को राष्ट्रीय हित और स्वतंत्रता संघर्ष की साझा परियोजना के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार भारतीय उद्योगपतियों ने राष्ट्रवाद को केवल आर्थिक लाभ के लिए नहीं, बल्कि राष्ट्रीय स्वाभिमान और स्वाधीनता के उद्देश्य से भी समर्थन दिया।

इस दृष्टिकोण में Ghanshyam Das Birla और Jamnalal Bajaj जैसे उद्योगपतियों को राष्ट्रवादी सहयोगी माना जाता है, जिन्होंने कांग्रेस को आर्थिक सहायता, वैचारिक समर्थन और संगठनात्मक सहयोग प्रदान किया।
राष्ट्रवादी इतिहासकारों का मानना है कि भारतीय उद्योगपति ब्रिटिश आर्थिक नीतियों के विरुद्ध राष्ट्रीय उद्योगों की रक्षा करना चाहते थे और इसी कारण वे कांग्रेस के साथ जुड़े। उनके अनुसार यह संबंध शोषणकारी वर्गीय गठबंधन नहीं बल्कि राष्ट्र-निर्माण की दिशा में साझेदारी थी।

हालाँकि आलोचक यह तर्क देते हैं कि राष्ट्रवादी दृष्टिकोण उद्योगपतियों के वर्गीय हितों और आर्थिक लाभ की आकांक्षाओं को पर्याप्त महत्व नहीं देता।

(ग) उदारवादी दृष्टिकोण : उदारवादी इतिहासकार इस संबंध को व्यावहारिक और सहयोगात्मक मानते हैं। उनके अनुसार कांग्रेस और उद्योगपतियों के बीच संबंध किसी वैचारिक अधीनता का परिणाम नहीं थे, बल्कि बदलती राजनीतिक परिस्थितियों के अनुरूप विकसित हुए।

उदारवादी दृष्टिकोण यह स्वीकार करता है कि उद्योगपतियों के आर्थिक हित थे, परंतु यह भी मानता है कि

कांग्रेस ने किसी एक वर्ग के हितों को पूर्ण रूप से प्राथमिकता नहीं दी। कांग्रेस के भीतर गांधीवादी, समाजवादी और पूँजीवादी विचार समानांतर रूप से मौजूद थे, जिससे संतुलन बना रहा।

इस दृष्टिकोण में कांग्रेस और पूँजीपति वर्ग का संबंध "परस्पर लाभकारी सहयोग" के रूप में देखा जाता है—कांग्रेस को आर्थिक संसाधन और समर्थन मिला, जबकि उद्योगपतियों को राष्ट्रीय आर्थिक सुरक्षा और नीति-निर्माण में स्थान प्राप्त हुआ।

(घ) तुलनात्मक मूल्यांकन : यदि इन तीनों दृष्टिकोणों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाए, तो स्पष्ट होता है कि कोई एक दृष्टिकोण पूर्णतः पर्याप्त नहीं है। मार्क्सवादी दृष्टिकोण वर्गीय हितों को समझने में सहायक है, राष्ट्रवादी दृष्टिकोण राष्ट्रीय चेतना और सहयोग को स्पष्ट करता है, जबकि उदारवादी दृष्टिकोण राजनीतिक व्यवहारिकता और संस्थागत संतुलन को सामने लाता है।

अतः कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के संबंधों को समझने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जिसमें राष्ट्रवाद, वर्गीय हित, आर्थिक नीति और राजनीतिक रणनीति—सभी को सम्मिलित किया जाए।

निष्कर्ष : "राष्ट्रीय आंदोलन में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और कांग्रेस की राजनीति: एक ऐतिहासिक अध्ययन" से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन केवल राजनीतिक स्वतंत्रता का संघर्ष नहीं था, बल्कि वह आर्थिक हितों, सामाजिक शक्तियों और वैचारिक प्रवृत्तियों के अंतर्संबंधों से निर्मित एक जटिल ऐतिहासिक प्रक्रिया भी था। औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और कांग्रेस के मध्य विकसित संबंध इस जटिलता का महत्त्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का उदय औपनिवेशिक आर्थिक ढाँचे की सीमाओं के भीतर हुआ। ब्रिटिश आर्थिक नीतियों ने जहाँ भारतीय उद्योगों को अनेक बाधाओं का सामना कराया, वहीं कुछ संरचनात्मक परिवर्तनों—जैसे परिवहन, संचार और व्यापारिक नेटवर्क के विस्तार—ने भारतीय उद्योगपतियों को उभरने का अवसर भी प्रदान किया। इस प्रकार भारतीय पूँजीपति वर्ग एक ऐसे सामाजिक-आर्थिक समूह के रूप में विकसित हुआ, जिसने अपने आर्थिक हितों की रक्षा के लिए राष्ट्रवादी राजनीति की ओर झुकाव प्रदर्शित किया।

कांग्रेस और औद्योगिक पूँजीपति वर्ग के संबंध न तो पूर्णतः वैचारिक थे और न ही केवल आर्थिक लाभ पर आधारित थे। दोनों के बीच एक प्रकार का व्यावहारिक और रणनीतिक सहयोग विकसित हुआ। कांग्रेस ब्रिटिश शासन से राजनीतिक स्वतंत्रता की आकांक्षी थी, जबकि औद्योगिक पूँजीपति वर्ग औपनिवेशिक आर्थिक नियंत्रण से मुक्ति और भारतीय उद्योगों के संरक्षण का समर्थक था। परिणामस्वरूप दोनों के बीच आर्थिक राष्ट्रवाद, स्वदेशी, संरक्षणवाद और राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता जैसे साझा बिंदुओं पर सहमति बनी।

Ghanshyam Das Birla, Jamnalal Bajaj तथा J. R. D. Tata जैसे उद्योगपतियों की भूमिका इस संदर्भ में अत्यंत उल्लेखनीय रही। इन उद्योगपतियों ने न केवल राष्ट्रीय आंदोलन को आर्थिक सहयोग प्रदान किया, बल्कि भारतीय उद्योगों के विस्तार, आर्थिक राष्ट्रवाद के विकास तथा स्वतंत्र भारत की औद्योगिक कल्पना को भी प्रभावित किया। विशेषकर बिड़ला और बजाज ने कांग्रेस नेतृत्व, विशेष रूप से Mahatma Gandhi के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखे और राष्ट्रवादी गतिविधियों को आर्थिक एवं नैतिक समर्थन प्रदान किया।

आर्थिक राष्ट्रवाद और Swadeshi Movement ने कांग्रेस और उद्योगपतियों के संबंधों को सुदृढ़ करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्वदेशी आंदोलन ने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और घरेलू उद्योगों के प्रोत्साहन के माध्यम से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को राजनीतिक संघर्ष से जोड़ दिया। इससे भारतीय उद्योगों को नया बाजार प्राप्त हुआ और राष्ट्रवादी राजनीति को आर्थिक आधार मिला।

कांग्रेस की आर्थिक नीतियों पर औद्योगिक पूँजीपति वर्ग का प्रभाव भी अध्ययन में स्पष्ट रूप से सामने आता है। कांग्रेस ने स्वदेशी, राष्ट्रीय उद्योगों के संरक्षण, आर्थिक स्वावलंबन तथा नियोजित विकास की अवधारणाओं को

अपनाया। साथ ही, उसने गांधीवादी विकेंद्रीकरण, ग्रामोद्योग तथा समाजवादी आर्थिक न्याय की प्रवृत्तियों को भी स्थान दिया। इससे स्पष्ट होता है कि कांग्रेस की आर्थिक नीति किसी एक वर्गीय दृष्टिकोण का परिणाम नहीं थी, बल्कि वह विविध वैचारिक प्रभावों के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास थी।

आलोचनात्मक विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि मार्क्सवादी, राष्ट्रवादी और उदारवादी—तीनों दृष्टिकोण इस विषय की आंशिक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। मार्क्सवादी दृष्टिकोण उद्योगपतियों के वर्गीय हितों को उजागर करता है, राष्ट्रवादी दृष्टिकोण राष्ट्रीय सहयोग और औपनिवेशिक विरोध को रेखांकित करता है, जबकि उदारवादी दृष्टिकोण राजनीतिक व्यावहारिकता और सहयोगात्मक संबंधों को समझने में सहायता प्रदान करता है। अतः इस विषय को समझने के लिए बहुआयामी और संतुलित दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय आंदोलन में औद्योगिक पूँजीपति वर्ग और कांग्रेस के संबंधों ने स्वतंत्र भारत की आर्थिक दिशा, औद्योगिक नीति तथा मिश्रित अर्थव्यवस्था की अवधारणा को गहराई से प्रभावित किया। यह संबंध भारतीय राष्ट्रवाद की उस ऐतिहासिक प्रक्रिया का हिस्सा थे जिसमें राजनीतिक स्वतंत्रता, आर्थिक आत्मनिर्भरता और आधुनिक राष्ट्र-निर्माण की आकांक्षाएँ परस्पर जुड़ी हुई थीं।

संदर्भ सूची (References / Bibliography) :

पुस्तकें (Books) :

1. Bipan Chandra, *India's Struggle for Independence*, New Delhi: Penguin Books, 1989.
2. Bipan Chandra, *The Rise and Growth of Economic Nationalism in India*, New Delhi: Har-Anand Publications, 1966.
3. Sumit Sarkar, *Modern India: 1885–1947*, New Delhi: Macmillan, 1983.
4. A. R. Desai, *Social Background of Indian Nationalism*, Mumbai: Popular Prakashan, 1948.
5. Judith Brown, *Gandhi: Prisoner of Hope*, New Haven: Yale University Press, 1989.
6. Sekhar Bandyopadhyay, *From Plassey to Partition and After*, New Delhi: Orient BlackSwan, 2004.
7. Percival Spear, *A History of India*, London: Penguin, 1965.
8. R. C. Dutt, *The Economic History of India*, New Delhi: Publications Division, Government of India.
9. D. D. Kosambi, *An Introduction to the Study of Indian History*, Mumbai: Popular Prakashan, 1956.
10. M. N. Roy, *India in Transition*, Calcutta, 1922.
11. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन, आर्थिक राष्ट्रवाद और उद्योगपतियों की भूमिका से संबंधित आलेख, विभिन्न शोध पत्रिकाएँ एवं विश्वविद्यालय प्रकाशन।
12. Indian History Congress द्वारा प्रकाशित शोधपत्र एवं कार्यवाही (Proceedings)।
13. Indian Council of Historical Research (ICHR) द्वारा प्रकाशित शोध सामग्री।
14. Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (FICCI) की रिपोर्टें और ऐतिहासिक दस्तावेज।
15. भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय, संस्कृति मंत्रालय तथा राष्ट्रीय अभिलेखागार से संबंधित दस्तावेज एवं रिपोर्टें।

•